जयपुर विकास प्राधिकरण

- बनाम -

श्री अशोक कुमार चौधरी व अन्य

(वर्ष 2002 की दीवानी अपील संख्या 5099)

15 सितम्बर, 2011

(डॉ. मुकुन्दाराम शर्मा एवं अनिल आर. दवे न्यायाधिपति)

अधिवक्ता अधिनियम, 1981

धारा 35 -अधिवक्ता -व्यावसायिक कदाचार -अधिवक्ता को विकास प्राधिकरण द्वारा रिटेनिंग वकील के रूप में नियुक्त किया गया-वह अपनी बहन की ओर से - एक मुआवजा मामले में उपसंजात हुआ जिसमें विकास प्राधिकरण दावों का विरोध कर रहा था तथा विकास प्राधिकरण द्वारा उसे दिये गये अनुबंध को भी स्वीकार कर लिया। क्योंकि वह उक्त कथित मुआवजे के मामले में दादों का विरोध करने के लिये वकील था किन्तु उसने प्रतिरक्षा नहीं की और जिसके परिणामस्वरूप मुआवजा न्यायालय द्वारा प्रतिकर की राशि को 16200 रूपये से बढ़ाकर 1.25 करोड़ कर दिया गया- कक्षीकार को आदेश संसूचित भी नहीं किया गया-विकास प्राधिकरण द्वारा अधिवक्ता के खिलाफ शिकायत -निर्णित परिवादी का एक संदत्त वकील होने के : बावजूद भी तथा हितों का विरोध होने के तथ्य के

बावजूद भी अधिवक्ता ने एक स्तर पर मामले का संचालन परिवादी के विरूद्ध किया- वह मामले में अपने हित का खुलासा करने की बाध्यता के अधीन था और उसे प्रस्ताव किये जाने पर बीफ लेने से इन्कार कर देना चाहिए था- उसने परिवादी द्वारा उस पर किये गये विश्वास को - धोखा दिया और अपनी बहन के लिए मुआवजा राशि में वृद्धि करवाने का मार्ग प्रशस्त किय- मामले का संचालन करने में अधिवक्ता का आचरण उसके अनुचित व्यवहार को स्पष्ट रूप से साबित और प्रमाणित करता है तथा वह व्यावसायिक कदाचार का दोषी है-यह निर्देश दिया जाता है कि अधिवक्ता छः माह की अवधि के लिये - वकालत से निलंबित किया जाए अधिवक्ता-व्यावसायिक नीति-भारतीय विधिज्ञ परिषद नियम 1961 अपीलार्थी, अर्थात् जयपुर विकास प्राधिकरण द्वारा प्रत्यर्थी संख्या 1 जिसे कि अपने कौंसिल के रूप में नियुक्त किया गया एवं अन्य अधिवक्ता प्रत्यर्थी संख्या 2 और 3 के विरूद्ध भी अधिवक्ता अधिनियम, 1961 की धारा 35 के अधीन शिकायत इस आधार पर दर्ज की गयी कि प्रत्यर्थी संख्या 1 उस दावेदार की ओर से उपस्थित हुआ जो कि उसकी बहन एवं प्रत्यर्थी संख्या 3 की पत्नी थी।

एक संदर्भित मामला जिसमें शिकायतकर्ता दावे का विरोध कर रहा था। उस मामले को प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए था। इस प्रकार के भौतिक तथ्यों को उजागर नहीं करना दुराचार की श्रेणी में आता है। राज्य बार कौंसिल की अनुशासन समिति के समक्ष मामला यह था कि प्रत्यर्थी संख्या 1 व 2 एक ही चैम्बर के सदस्य थे तथा प्रत्यर्थी

संख्या 3 प्रत्यर्थी संख्या 1 का बहनोई था। इस प्रकार समस्त प्रत्यर्थीगण आपस में मित्र एवं गहन संबंधी थे। प्रत्यर्थी संख्या 1 की मिलीभगत से प्रत्यर्थी संख्या 2 के चार संबंधी एवं प्रत्यर्थी संख्या 3 की पत्नी ने विवादित सम्पत्ति क्रय की जो कि व्यावसायिक दुराचार था। प्रत्यर्थी संख्या 1 ने प्रतिरक्षा न कर साशय अपीलार्थी के हितों के विरूद्ध कार्य किया।

चूंकि अनुशासन समिति राज्य बार कौंसिल द्वारा शिकायत की कार्यवाही एक वर्ष की विहित समय अवधि में निस्तारित नहीं की जा सकी अतः शिकायत बार कौंसिल आॅफ इण्डिया को अंतरित हुई जिसके द्वारा निर्णय दिनांक 24.03.2002 को शिकायत खारिज कर दी गयी। शिकायतकर्ता द्वारा अपील फाईल की गयी।

अपील का निर्णय करते हुए न्यायालय द्वारा कहा गया कि उजागर तथ्यों से यह स्थापित हुआ है कि प्रश्नगत भूमि की कीमत निर्धारित करते हुए कलेक्टर द्वारा एक आवार्ड दिनांक 04.03.1982 को पारित किया गया जिससे कि सम्पूर्ण भूमि की कीमत 16,200/-तय की गयी। उस समय दावेदार तीनो भूस्वामी थे। उक्त अवार्ड पारित होने के पश्चात तीनो भूस्वामी द्वारा अधिकार क्षतिपूर्ति प्राप्ति हेतु अधिकार एसएस को अन्तरित कर दिये गये।

जयपुर विकास प्राधिकरण वी.श्री अशोक कुमार चौधरी 405

जिसने आगे प्रत्यर्थी संख्या 2 के चार रिश्तेदारों, प्रत्यर्थी संख्या 1 की बहन एवं 3 की पत्नी श्रीमती ''ए'' के पक्ष में विलेख निष्पादित किया एवं वे संदर्भित कार्यवाही प्रकरण संख्या 14/1482 में दावेदार पक्षकार के रूप में प्रतिस्थापित हुए। उक्त प्रतिस्थापन पश्चात श्रीमती ए एवं प्रत्यर्थी संख्या 2 के चार रिश्तेदार कार्यवाही में पक्षकार हुए। उक्त संदर्भित मामले में दिनांक 19.01.1990 को प्रत्यर्थी संख्या 1, प्रत्यर्थी संख्या 3 जो कि उसकी बहन एवं प्रत्यर्थी संख्या 3 की पत्नी श्रीमती ''ए'' के लिए उपस्थित होने के बावजूद भी दावे का प्रतिरोध करने हेतु कौंसिल के रूप में दी गयी नियुक्ति स्वीकार कर ली गई, जिसमें कि उसकी बहन एक दावेदार थी। अभिलेख से भी यही स्पष्टतः उजागर था कि प्रत्यर्थी संख्या 1 वर्ष 1989 से अपीलार्थी का कौंसिल था। अतः वह 19.01.1990 को प्रत्यर्थी संख्या 3 की पत्नी की ओर से उपस्थित नहीं हो सकता था। इस प्रकार प्रत्यर्थी संख्या 1 न केवल समिति मामले में प्रत्यर्थी संख्या 3 की पत्नी के लिए उपस्थित हुआ वरन उसी मामले जिसके कि उसकी बहन दावेदार का प्रतिरोध कर रही थी, उसके प्रत्यर्थी के रूप में उपस्थित हुआ।

आगे दिनांक 07.12.1991 को लिखित जवाब पेश किया जाना था परन्तु लिखित जवाब पेश नहीं किया गया। यहां तक कि उक्त कार्यवाही प्रत्यर्थी 1 उक्त दिनांक को उपस्थित नहीं आया जिस पर अपीलार्थी की प्रतिरक्षा बंद कर दी गयी।

यहां तक कि प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा यह तथ्य अपीलार्थी की जानकारी में नहीं लाया गया और इसके पश्चात जब प्रकरण दिनांक 10.11.1993 में साक्ष्य लेखबद्ध हेतु मुकर्रर किया गया तब प्रत्यर्थी द्वारा न्यायालय को यह सूचित किया गया कि अपीलार्थी की ओर से कोई साक्ष्य पेश नहीं की गयी है। उक्त कथन इस संबंध में अपीलार्थी को कोई सकारात्मक निर्देश दिये बिना तथा अपीलार्थी को सूचित किये बिना किये गये प्रतीत हुए।

परिणामतः प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा प्रस्तुत अभयावेदन पर दिनांक 10.11.93 को अपीलार्थी की साक्ष्य बंद कर दी गई एवं प्रकरण बहस हेतु मुकर्रर किया गया। संदर्भित न्यायालय द्वारा दिनांक 02.12.93 को क्षतिपूर्ति राशि 16,200/-से बढाकर 1.25 करोड़ तक बढाने हेतु आदेश पारित किया गया। प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा उक्त आदेश भी अपीलार्थी को संसूचित नहीं किया गया। आदेश बाद में अपास्त किया गया। यह प्रतिरक्षा ली गई कि उपस्थिति दिनांक 19.01.1990 पेशी के संबंध में कोई भ्रम था। उपस्थिति पेशी दिनांक 19.01.1990 को प्रकरण संख्या 14/1482 हेतु मुकर्रर थी वह किसी अन्य प्रकरण हेतु थी, परन्तु उक्त पेशी उपस्थिति में अद्योलखन द्वारा हेरफेर प्रतीत हुआ।

1.3 प्रत्यर्थी संख्या 1 की नियुक्ति के संदर्भ में एवं उसके रिटेनिंग वकील होने के नाते, उसका यह दायित्व है कि वह मामले के विकास के

संबंध में सभी जानकारी प्रदान करे और पारित आदेशों की प्रतियां के साथ अपनी राय भी प्रदान करे। उसकी ओर से आवश्यक एवं प्रतिरक्षा काटने के आदेश को वापस लेने के लिए कदम उठाने के लिए बाध्य था। कम से कम उन्हें ऐसी सलाह तो भेजनी ही चाहिए थी. उन्होंने अपीलकर्ता के वैतनिक अनुचर होने के बावजूद और इस तथ्य के बावजूद कि हितों का टकराव था, अपीलकर्ता के खिलाफ एक चरण का संचालन किया। दरअसल, प्रत्यर्थी संख्या 1 मामले में अपनी रुचि का खुलासा करने के लिए बाध्य था और जब उसे संक्षिप्त जानकारी की पेशकश की गई तो उसे स्वीकार करने से इनकार कर देना चाहिए था। ऐसा कुछ भी नहीं किया गया बल्कि वह शिकायतकर्ता-अपीलकर्ता द्वारा उस पर जताए गए भरोसे को धोखा देकर एक कदम आगे बढ़ गया। उन्होंने अपनी बहन के लिए मुआवजे में बढ़ोतरी का रास्ता साफ कर दिया. इसलिए, यह स्थापित किया गया है कि प्रत्यर्थी संख्या 1 ने पूरी कार्यवाही का चरणबद्ध प्रबंधन किया और यह निर्धारित किया नए प्रतिस्थापित दावेदारों के उच्च दावे को स्वीकार कर लिया जाए। [पैरा 21] [416-एफ-एच; 417-ए]

जयपुर विकास प्राधिकरण वी. श्री अशोक कुमार चौधरी 407

वीसी. रंगादुरई बनाम. डी. गोपालन और अन्य 1979 (1)

एससीआर 1054 (1979) 1 एससीसी 308 पर भरोसा किया।

1.4 प्रत्यर्थी संख्या 1 की गतिविधियाँ एक पेशेवर वकील के लिए अशोभनीय थी और दुराचार और कदाचार का स्पष्ट मामला भी था। उन्होंने उस पेशेवर नैतिकता का पालन नहीं किया जिसके द्वारा वह बंधे थे और अपने सायल के हितों की रक्षा करने में विफल रहे। तथ्य स्पष्ट रूप से उसके दुष्कर्म और कदाचार को साबित और स्थापित करते हैं। यह न्यायालय प्रत्यर्थी संख्या 1 को व्यावसायिक दुराचार का दोषी पाता है। प्रत्यर्थी संख्या 1 के संबंध में बार काउंसिल ऑफ इंडिया की अनुशासन समिति द्वारा पारित आदेश को संशोधित किया जाकर यह आदेशित किया गया और निर्देश दिया गया कि उन्हें छह महीने की अवधि के लिए एक वकील के रूप में अभ्यास से निलंबित कर दिया जाए। [पैरा 19,23,25-27 और 29] [415-एफ; 418-डी; 419-सी]

पवन कुमार शर्मा बनाम. गुरदयाल सिंह 1998 (2) सप्ल.एससीआर 28 (1998) 7 एससीसी 24-संबंधित।

2. जहां तक प्रत्यर्थी संख्या 2 के विरुद्ध आरोप का संबंध है, वह संदर्भ केस संख्या 14/1982 में एक वकील के रूप में उपस्थित हुए हैं वह स्वयं दावेदार नहीं थे। यह सही है कि वह प्रत्यर्थी संख्या 1 के कक्ष में ही बैठते हैं, लेकिन केवल इस तथ्य से, यह नहीं माना जा सकता कि वह भी प्रत्यर्थी संख्या 1 के समान कदाचार का दोषी है। हालाँकि उसके रिश्तेदारों ने मुआवजे का दावा करने का अधिकार खरीद लिया है और खुद को

दावेदार के रूप में प्रतिस्थापित किया है, लेकिन वह केवल एक अधिवक्ता के रूप में उनका प्रतिनिधित्व कर रहा है और इसके अलावा अपीलकर्ता द्वारा कोई अन्य तथ्य साबित नहीं किया गया है जिससे उसका अपराध साबित हो सके। या कदाचार कहा जा सकता है। प्रत्यर्थी संख्या 3 केवल संदर्भ मामले में अपनी पत्नी का प्रतिनिधित्व कर रहा था और प्रत्यर्थी संख्या 1 का चैंबर-मेट था। हालाँकि उनकी पत्नी स्वयं एक दावेदार थीं, और उनकी पत्नी और प्रत्यर्थी संख्या 1 के बीच एक अपवित्र गठबंधन हो सकता है, लेकिन साबित करने और स्थापित करने के लिए अभिलेख पर पर्याप्त साक्ष्य नहीं हैं।

ए कि प्रत्यर्थी संख्या 3 ने कोई कदाचार किया है. इसलिए, अनुशासनात्मक समिति के आदेश में प्रत्यर्थी संख्या 2 और 3 आरोपों के लिए दोषी नहीं हैं और उनके खिलाफ लगाए गए कदाचार के आरोप बरकरार हैं। [पैरा 28-29] [418-जी-एच; 419-ए-सी]

बी केस कानून संदर्भ:

1979 (1) एससीआर 1054 पर भरोसा 22 के लिए

1998 (2) पूरक। एससीआर 28 पर भरोसा 25 के लिए

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील संख्या 5099/2002।

बी.सी.आई. में बार काउंसिल ऑफ इंडिया की अनुशासनात्मक समिति के निर्णय एवं आदेश दिनांक 24.03.2002 से।

डी ट्रांसफर केस नंबर 74, 1995।

के लिए मुकुल कुमार, मिलिंद कुमार, डी.एस.चौहान

अपीलकर्ता.

बी.के. सतीजा, सुबोध के. पाठक, डी.के. सिन्हा, एम.एल. उत्तरदाताओं के लिए लाहोटी, ई पबन के. शर्मा, गार्गी, भट्टा भारलाब।

न्यायालय का निर्णय सुनाया गया

डॉ। मुकुंदकम शर्मा, 1. हस्तगत अपील, अधिवक्ता अधिनियम, 1961 की धारा 38 के तहत, (इसके बाद "अधिनियम"के रूप में संदर्भित) बार काउंसिल ऑफ इंडिया की अनुशासन समिति के दिनांक 24.03.2002 के अंतिम निर्णय के खिलाफ दायर की गई है [इसके बाद इसे अनुशासन समिति के रूप में जाना जाएगा] 1995 के बीसीआई ट्रांसफर केस नंबर 74 में, जिसके तहत समिति ने अपीलकर्ता जी की शिकायत को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि किसी भी कदाचार का कोई मामला नहीं बनता है।

2. वर्तमान मामले को दाखिल करने के तथ्य यह हैं कि वर्तमान शिकायत जयपुर विकास प्राधिकरण द्वारा अधिनियम की धारा 35 के तहत वर्तमान उत्तरदाताओं के खिलाफ राजस्थान स्टेट बार काउंसिल के समक्ष वर्ष 1994 में दायर की गई थी।

जिसे राजस्थान स्टेट बार काउंसिल की अनुशासन समिति को सौंपा गया। चूंकि कार्यवाही एक वर्ष की निर्धारित अवधि में पूरी नहीं की जा सकी, इसलिए शिकायत को वर्ष 1995 में बार काउंसिल ऑफ इंडिया को स्थानांतरित कर दिया गया, जिसे ट्रांसफर केस नंबर 74 ऑफ 1995 के रूप में दर्ज किया गया।

3. शिकायत में लगाए गए आरोप यह थे कि अपीलकर्ता ने जयपुर, राजस्थान में विभिन्न न्यायालयों में लंबित अपने मामलों की रक्षा के लिए प्रत्यर्थी संख्या 1 को रिटेनर आधार पर नियुक्त किया था। वर्ष 1990 में, राजस्थान भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 18 के तहत कुछ संदर्भ मामलों में जयपुर विकास प्राधिकरण का बचाव करने के लिए प्रत्यर्थी संख्या 1 को नियुक्त किया गया था। इसके अलावा, दिनांक 05.10.1990 को, प्रत्यर्थी संख्या 1 को 1982 के भूमि अधिग्रहण संदर्भ संख्या 14, अब्दुल समद और अन्य बनाम में जयपुर विकास प्राधिकरण का बचाव करने के लिए जयपुर शहर में सिविल कोर्ट जयपुर विकास प्राधिकरण में नियुक्त किया गया था। यहां तक कि उनकी रिटेनरशिप फीस में भी 600/- रुपये प्रतिमाह की अतिरिक्त बढ़ोतरी की गई थी।

4. भूमि अधिग्रहण संदर्भ संख्या 14/1982 दिनांक 07.12.1991 को न्यायालय में लिखित जवाब दाखिल करने के लिए तय किया गया था। प्रत्यर्थी संख्या 1 न तो 07.12.1991 को अदालत में उपस्थित हुआ, न ही अपीलकर्ता की ओर से लिखित जवाब दायर किया। परिणामतः न्यायालय ने दिनांक 07.12.1991 को अपीलकर्ता की ओर से लिखित बयान दाखिल करने का अवसर बंद कर दिया। प्रत्यर्थी संख्या 1 ने अपीलकर्ता को विद्वान न्यायालय के आदेश दिनांक 07.12.1991 के बारे में सूचित नहीं किया। उक्त भूमि अधिग्रहण संदर्भ संख्या 14/1982 में दावेदार ने अदालत में गवाहों को परीक्षित करवाया, लेकिन प्रत्यर्थी ने न तो उन गवाहों से जिरह की और न ही अपीलकर्ता को इसके बारे में सूचित किया। इसके अलावा, उक्त संदर्भ में, संपूर्ण साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए दिनांक 10.11.1993 निर्धारित की गई थी, लेकिन प्रत्यर्थी द्वारा अपीलकर्ता को उपरोक्त तिथि के संबंध में कोई सूचना नहीं दी गई थी, जिसके परिणामस्वरूप विद्वान न्यायालय द्वारा अपीलार्थी साक्ष्य बंद करने का आदेश दिया गया। प्रत्यर्थी ने दिनांक 10.11.1993 के उपरोक्त आदेश के बारे में भी अपीलकर्ता को सूचित नहीं किया।

5. अंततः, 1982 के भूमि अधिग्रहण संदर्भ संख्या 14 पर अपीलकर्ता के खिलाफ 02.12.1993 को निर्णय लिया गया और उस निर्णय में कोर्ट द्वारा 1.25 करोड़ के पंचाट की घोषणा की गई। यहां तक कि न्यायालय द्वारा पारित अंतिम आदेश भी अपीलकर्ता को नहीं बताया गया।

अपीलकर्ता को उपरोक्त आदेश पारित होने के बारे में पहली बार 24.03.1994 को पता चला जब श्री माणक चंद सुराणा - प्रत्यर्थी संख्या 2 ने निष्पादन न्यायालय में 1993 की निष्पादन याचिका संख्या 20 दायर की और एक अन्य निष्पादन याचिका श्रीमती आशा गुप्ता, प्रत्यर्थी क्रमांक 3 की पत्नी द्वारा दायर की गई। ।

6. अपीलकर्ता ने राजस्थान बार परिषद से उपरोक्त आधार पर अधिनियम की धारा 35 के तहत प्रतिवादियों के खिलाफ उचित कार्रवाई करने करने की मांग की। यह भी तर्क दिया गया कि प्रत्यर्थी संख्या 2 उसी चैम्बर में काम करती है जिसमें प्रत्यर्थी संख्या 1 बैठता है और प्रत्यर्थी संख्या 3 प्रत्यर्थी संख्या 1 का बहनोई है। इसलिए, इस तरह से, सभी उत्तरदाता एक-दूसरे से घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं एवं दोस्त हैं और प्रत्यर्थी संख्या 1 की मिलीभगत से प्रत्यर्थी संख्या 2 और प्रत्यर्थी संख्या 3 की पत्नी ने लाभ हेतु विवादित संपत्ति में अधिकार प्राप्त किये है, जो पेशेवर कदाचार की श्रेणी में आता है। प्रत्यर्थी संख्या 1 ने प्रतिरक्षा के दौरान साशय अपीलकर्ता के हित के विरुद्ध कार्य किया।

7. शिकायत को राज्य बार काउंसिल ऑफ राजस्थान की अनुशासन समिति को सौंपा गया था, लेकिन चूंकि शिकायत में कार्यवाही एक वर्ष की निर्धारित अवधि के भीतर राज्य बार काउंसिल ऑफ राजस्थान की

अनुशासन समिति द्वारा समाप्त नहीं की जा सकी, इसलिए वर्ष 1995 में इसे बार काउंसिल ऑफ इंडिया को हस्तांतरित कर दिया गया।

8. बार काउंसिल ऑफ इंडिया ने अंतिम निर्णय दिनांक 24.03.2002 द्वारा शिकायत को खारिज कर दिया। बार काउंसिल ऑफ इंडिया के दिनांक 24.03.2002 के इस फैसले के खिलाफ जयपुर विकास प्राधिकरण ने धारा 38 के तहत अपील दायर की है।

जयपुर विकास प्राधिकरण बनाम. श्री अशोक कुमार 411 चौधरी (डॉ. मुकुंदकम शर्मा, जे.जे.

पक्षकारान की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

9. हमने उन पक्षों की ओर से पेश विद्वान वकील को सुना, जिन्होंने हमें पूरे रिकॉर्ड के बारे में बताया। अपीलकर्ता की ओर से पेश वकील ने हमारे समक्ष प्रस्तुत किया कि बार काउंसिल ऑफ इंडिया की अनुशासनात्मक समिति द्वारा पारित आदेश अवैध था और इसलिए, रद्द किए जाने योग्य है। वकील द्वारा यह प्रस्तुत किया गया कि अनुशासनात्मक समिति का यह निष्कर्ष कि प्रत्यर्थी संख्या 1 ने शिकायतकर्ता के मामले को ठीक से नहीं चलाया, यह आरोप फाइल पर साबित नहीं हुआ, गलत है और रिकॉर्ड के खिलाफ है। उन्होंने अनुशासनात्मक समिति के निष्कर्षों पर भी इस आशय की आलोचना की कि प्रत्यर्थी संख्या 1 ने शिकायतकर्ता के मामले के संचालन में बिल्कुल

भी लापरवाही नहीं बरती और उक्त निष्कर्ष उन रिकॉर्डों के विपरीत हैं जिन पर उसने भरोसा किया था। प्रतिवादी संख्या 1, 2, 3 के कथित कदाचार, दुर्व्यवहार, दुष्कर्म के विभिन्न उदाहरण सबूतों एवं प्रस्तुत साक्ष्य के विश्लेषण के सन्दर्भ में प्रस्तुत किये गये।

10. अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित अधिवक्ता ने भी घटनाओं के अनुक्रम का विश्लेषण किया और इस तर्क का समर्थन करने के लिए तारीखों की एक सूची हमारे सामने रखी कि प्रत्यर्थी संख्या। अपीलकर्ता से नियुक्ति स्वीकार करने के बाद पेशेवर नैतिकता का उल्लंघन किया और उस पर जताए गए भरोसे का भी दुरुपयोग किया। उन्होंने उस सन्दर्भ में निम्नलिखित तथ्य हमारे विचारार्थ रखे हैं।

11. उन्होंने प्रस्तुत किया कि अपीलकर्ता द्वारा दायर की गई शिकायत में कहा गया है कि प्रत्यर्थी संख्या 1 को अपीलकर्ता संस्था द्वारा वर्ष 1989 में संस्था के विरुद्ध दायर सिविल न्यायालय के समक्ष लंबित ऐसे सभी मामलों के संचालन के लिए नियुक्त किया गया था। कि प्रत्यर्थी संख्या 1 को 1990 में अपीलकर्ता के खिलाफ दायर सभी संदर्भ मामलों और सभी लंबित संदर्भों में उपस्थित होने और पैरवी करने के लिए भी अधिकृत किया गया था और उपरोक्त प्रतिबद्धता के कारण, अपीलकर्ता द्वारा प्रत्यर्थी संख्या 1 को प्रति माह 600/- रुपये की विशेष वृद्धि प्रदान की गई थी।

अभिलेखों से यह भी ज्ञात होता है कि सन्दर्भ प्रकरण क्र. 14/1982 जो दायर की गई शिकायत का आधार और विषय वस्तु है, भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 18 के तहत एक भूमि अधिग्रहण मामला था जो सिविल कोर्ट, जयपुर शहर, जयपुर में लंबित था जिसमें प्रत्यर्थी संख्या 1 को अपीलार्थी की ओर से अधिवक्ता के रूप में मामले का संचालन करने के लिए अधिकृत किया गया था। संचालन दिनांक 5.10.1990 से था और उन्होंने उक्त तिथि से उक्त मामले का संचालन शुरू कर दिया। हालाँकि, हमारे सामने रखे गए रिकॉर्ड से यह भी पता चलता है कि उपरोक्त संदर्भ केस नं. 14/1982, कलेक्टर ने भूमि मालिकों अब्दुल समद, अब्दुल लतीफ और अब्दुल हामिद के पक्ष में सम्पूर्ण भूमि के लिए केवल 16,200/- रुपये का भूमि मुआवजा निर्धारित किया।

12. इसके बाद श्रीमती शांता शर्मा ने 20.9.1980 और 5.2.1982 को उक्त भूमि में मुआवजा मांगने का अधिकार हासिल किया। दिनांक 30.1.1990 को श्रीमती शांता शर्मा ने प्रत्यर्थी संख्या 2 के रिश्तेदारों विमला सुराणा, राजेंद्र सुराणा, जीतेंद्र सुराणा और माणक सुराणा और श्रीमती आशा गुप्ता, प्रत्यर्थी संख्या 3 की पत्नी, जो प्रत्यर्थी संख्या 1 की बहन भी है के पक्ष में एक असाइनमेंट डीड निष्पादित किया। अभिलेख से यह भी दृष्टिगत हुआ कि प्रत्यर्थी संख्या 2 एवं प्रत्यर्थी संख्या 3 की पत्नी के वास्तविक स्वामी के प्रतिस्थापन पश्चात संदर्भ न्यायालय के समक्ष उच्च मुआवजा राशि प्राप्ति हेतु उपस्थित हुए। वे संदर्भ न्यायालय में

प्रतिस्पर्धी पक्ष थे जिनका प्रतिनिधित्व प्रत्यर्थी संख्या 2 और प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा किया गया था।

13. उन्होंने यह भी बताया कि 19.1.1990 को प्रत्यर्थी संख्या 1 प्रत्यर्थी संख्या की पत्नी की ओर से उपस्थित हुआ। जो उसकी बहन थी, उसे कार्यवाही में दावेदार के रूप में प्रतिस्थापित किया गया था। उक्त तथ्य के बावजूद, ऐसा प्रतीत होता है कि 5.10.1990 को, अपीलकर्ता ने प्रत्यर्थी संख्या 1 को अपने वकील के रूप में नियुक्त किया, जिसे प्रत्यर्थी संख्या द्वारा स्वीकार कर लिया गया। इस तथ्य का खुलासा किए बिना कि वह प्रत्यर्थी संख्या 3 की ओर से मामले में पहले ही पेश हो चुका है। जैसे भी हो, तारीख तय हो गई।

7.12.1991 को उक्त कार्यवाही में लिखित जवाब पेश किये जाने की तारीख तय हो गयी। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी संख्या 1 जो कि अपीलकर्ता का प्रतिनिधित्व कर रहा था, उस तारीख को कार्यवाही में उपस्थित नहीं हुआ और न ही उसने लिखित जवाब तैयार किया था। चूंकि लिखित बयान दर्ज नहीं किया गया था, और प्रत्यर्थी संख्या 1 भी नियत तिथि पर उपस्थित नहीं हुआ, अपीलार्थी की प्रतिरक्षा काट दी गयी। परन्तु प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा उक्त तथ्य अपीलार्थी के संज्ञान में नहीं लाया गया। इसके बाद उक्त संदर्भ कार्यवाही में साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए एक तारीख तय की गई। उक्त तिथि 10.11.1993 को, प्रत्यर्थी संख्या 1 ने अदालत को

सूचित किया कि अपीलकर्ता की ओर से कोई सबूत पेश नहीं किया जाना है। प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा दिए गए उपरोक्त बयान के मद्देनजर, साक्ष्य को बंद करने और मामले को अंतिम सुनवाई के लिए तय करने का आदेश पारित किया गया था।

14. इसके बाद संदर्भ पर बहस की गई और यह अपीलकर्ता का तर्क है कि प्रत्यर्थी संख्या 1 ने उक्त सन्दर्भ पर ठीक से बहस नहीं की। जो भी हो, 2.12.1993 को अधिग्रहीत भूमि का मुआवजा 16,200/- रुपये से बढ़ाकर 1.25 करोड़ रुपये करने का आदेश पारित किया गया। अपीलकर्ता का आरोप है कि उक्त आदेश की भी सूचना नहीं दी गयी और अपीलकर्ता को उपरोक्त स्थिति तथा मुआवजे के मूल्य में वृद्धि के आदेश के बारे में निष्पादन हेतु मामला दायर होने पर ही पता चला। आगे आरोप यह था कि जब प्रतिरक्षा काट दी गयी तो प्रत्यर्थी संख्या 1 उपस्थित नहीं हुआ और न ही उसने उक्त आदेश को अपास्त करवाने के लिए कोई कदम उठाया। उन्होंने आदेश के बारे में भी नहीं बताया और उसके बाद भी, अंतिम आदेश पारित होने पर भी कोई संचार नहीं हुआ, इस तथ्य के बावजूद कि उन्हें प्रत्येक चरण पर मामले के विकास के बारे में सूचित करना आवश्यक था। जहां तक प्रत्यर्थी संख्या 2 और 3 का संबंध है, आरोप यह था कि उक्त प्रत्यर्थी संख्या 2 और 3 भी अधिवक्ता हैं जो प्रत्यर्थी संख्या के साथ एक ही चैम्बर साझा करते हैं। उन्होंने चैंबर के आवंटन के लिए संयुक्त आवेदन

दायर किया, जो दर्शाता है कि वे एक साथ काम कर रहे हैं और इसलिए, वे भी उपरोक्त साजिश के पक्षकार हैं।

व्यावहारिक रूप से अपीलकर्ता के खिलाफ अवैध लाभ प्राप्त करने के लिए एक पक्षीय आदेश प्राप्त करना।

15. इसमें कहा गया है कि बाद में अपीलकर्ता द्वारा दायर आवेदन पर, संदर्भ न्यायालय के उपरोक्त निर्णय और आदेश को रद्द कर दिया गया है।

16. प्रत्यर्थी संख्या की ओर से उपरोक्त कथित चूक और जानबूझकर की गई चूक के लिए उपरोक्त शिकायत अपीलकर्ता द्वारा अधिवक्ता अधिनियम की धारा 35 के तहत प्रत्यर्थी संख्या 1 के खिलाफ कदाचार का आरोप लगाते हुए तथा 2 और 3 इस आधार पर कि वह अपीलकर्ता के वकील के रूप में अपनी नियुक्ति से पहले वह दावेदार के लिए उपस्थित हुआ था। यह भी आरोप लगाया गया कि एक असाइनमेंट डीड के बाद से प्रत्यर्थी संख्या 1 की बहन के पक्ष में दिनांक 30.1.1990 को फैसला सुनाया गया। प्रत्यर्थी संख्या 1 को ब्रीफ को स्वीकार नहीं करना चाहिए था और यह तथ्य कि उसने भौतिक तथ्यों का खुलासा किए बिना नियुक्ति स्वीकार कर ली, कदाचार के आरोप को साबित और स्थापित करता है।

17. हालाँकि, अपीलकर्ता की ओर से पेश वकील के विभिन्न तर्कों को सभी उत्तरदाताओं संख्या 1, 2 और 3 की ओर से पेश वकील द्वारा खारिज

कर दिया गया था। उन्होंने उक्त उत्तरदाताओं द्वारा दर्ज की गई शिकायत पर दायर किए गए जवाबों और सभी उत्तरदाताओं को दोषमुक्त करते हुए अनुशासनात्मक समिति द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों पर भी भरोसा किया है।

18. उपरोक्त दलीलों के आलोक में, आइए हम वर्तमान मामले के तथ्यों की जांच करें। यहां बताए गए तथ्यों से, यह स्थापित होता है कि 4.3.1982 को कलेक्टर द्वारा भूमि के संबंध में एक पंचाट पारित किया गया था, जिसमें संपूर्ण भूमि का मूल्य 16,200/- रुपये निर्धारित किया गया था। उस समय दावेदार तीन भूमि मालिक थे। उपरोक्त पंचाट पारित होने के बाद, तीन भूमि मालिकों, अर्थात् अब्दुल समद और दो अन्य ने दिनांक 20.9.1980 और 5.2.1982 को श्रीमती शांता शर्मा को मुआवजा प्राप्त करने का अधिकार हस्तांतरित कर दिया। श्रीमती इसके बाद शांता शर्मा ने प्रत्यर्थी संख्या के रिश्तेदारों के पक्ष में असाइनमेंट डीड निष्पादित की।

इसके बाद श्रीमती शांता शर्मा ने प्रत्यर्थी संख्या 2 के रिश्तेदारों विमला सुराणा, राजेंद्र सुराणा, जीतेंद्र सुराणा और माणक सुराणा के पक्ष में असाइनमेंट डीड निष्पादित किया गया था। उपलब्ध रिकॉर्ड से यह भी पता चलता है कि प्रत्यर्थी संख्या 2 के उपरोक्त रिश्तेदार और प्रत्यर्थी संख्या 3 की पत्नी श्रीमती आशा गुप्ता ने भी संदर्भ कार्यवाही में खुद को प्रतिस्थापित

कराया, जो संदर्भ मामला संख्या 14/1982 है। इन व्यक्तियों ने खुद को केवल ऐसे असाइनमेंट के आधार पर प्रतिस्थापित कराया, जिसके बिना उन्हें खुद को मूल स्वामियों के स्थान पर प्रतिस्थापित कराने का कोई अधिकार नहीं था। उपरोक्त प्रतिस्थापन के बाद प्रत्यर्थी संख्या 3 की पत्नी एवं प्रत्यर्थी संख्या 1 की बहन श्रीमती आशा गुप्ता एवं प्रत्यर्थी संख्या 2 के उपरोक्त रिश्तेदार सन्दर्भ कार्यवाही के दावेदार थे। प्रत्यर्थी संख्या 1 अपनी बहन (प्रत्यर्थी संख्या 3 की पत्नी) के लिए 19.1.1990 को उक्त संदर्भ मामले में उपस्थित हुआ।

19. उपरोक्त तथ्य के बावजूद, प्रत्यर्थी संख्या 1 ने उपरोक्त प्रतियोगी दावेदारों, जिनमें से एक उसकी अपनी बहन थी, के दावे का मुकाबला करने के लिए वकील के रूप में अपीलकर्ता द्वारा दी गई नियुक्ति को स्वीकार कर लिया। हमें रिकॉर्ड से यह भी पता चलता है कि वास्तव में प्रत्यर्थी संख्या 1 वर्ष 1989 से अपीलकर्ता का रिटेनिंग वकील था और इसलिए, वह प्रत्यर्थी संख्या 1 की पत्नी की ओर से 19.1.1990 को उपस्थित नहीं हो सकता था। प्रत्यर्थी संख्या 1 न केवल प्रत्यर्थी संख्या 3 की पत्नी के लिए उपस्थित हुआ। बल्कि उसी संदर्भ में वह अपीलकर्ता के लिए भी उपस्थित हुए, जिसमें अपनी बहन सहित दावेदार के दावों का विरोध कर रहे थे। प्रत्यर्थी संख्या 1 की ये गतिविधियाँ एक पेशेवर वकील के लिए अशोभनीय थी और कदाचार के भी स्पष्ट मामले थे

20. बचाव यह लिया गया था कि 19.1.1990 को उपस्थिति पर्ची के संबंध में कुछ भ्रम था, जो कि 19.1.1990 को उपरोक्त संदर्भ मामले में दायर की गई उपस्थिति पर्ची एक अलग मामले के लिए थी। लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि उक्त उपस्थिति पर्ची पर बाद में ओवर राइटिंग कर हेराफेरी की गई है। प्रत्यर्थी संख्या 1 का दुराचार केवल उपरोक्त स्थिति के साथ समाप्त नहीं हुआ।

दिनांक 7.12.1991 को लिखित बयान दाखिल करना आवश्यक था, लेकिन ना तो ऐसा कोई लिखित बयान तैयार नहीं किया गया था और न ही इसे दायर किया गया था और यहां तक कि प्रत्यर्थी संख्या 1 उस तारीख को उक्त कार्यवाही में उपस्थित नहीं हुआ, परिणामतः अपीलकर्ता का बचाव रद्द कर दिया गया था। यहां तक कि उक्त तथ्य प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा अपीलकर्ता के ध्यान में नहीं लाया गया। उसके बाद भी जब मामला 10.11.1993 को साक्ष्य की रिकॉर्डिंग के लिए सूचीबद्ध किया गया था, तो प्रत्यर्थी संख्या 1 ने अदालत को सूचित किया कि अपीलकर्ता की ओर से कोई सबूत पेश नहीं किया जा रहा है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह बयान इस संबंध में किसी भी सकारात्मक निर्देश के बिना और अपीलकर्ता को सूचित किए बिना दिया गया है। प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा दिए गए उपरोक्त अभ्यावेदन के परिणामस्वरूप। अपीलकर्ता का साक्ष्य दिनांक 10.11.1993 को बंद कर दिया गया था और मामला बहस के लिए तय किया गया था। 2.12.1993 को संदर्भ न्यायालय द्वारा मुआवजे को 16,200/- रुपये से

बढ़ाकर 1.25 करोड़ रुपये करने का आदेश पारित किया गया। उक्त आदेश भी अपीलकर्ता को प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा भी सूचित नहीं किया गया था।

21. हालाँकि, प्रत्यर्थी संख्या 1 की ओर से उपस्थित वकील ने अपनी दलीलों के दौरान कहा कि उसे किसी भी प्रमाणित प्रति के लिए आवेदन करने और उसे अपनी नियुक्ति के संदर्भ में अपीलकर्ता को भेजने की आवश्यकता नहीं है। लेकिन उक्त तथ्य इस तथ्य से झूठलाया गया है कि उसकी नियुक्ति के संदर्भ में एक रिटेनिंग वकील होने के नाते, मामले के विकास के संबंध में सभी जानकारी प्रदान करना और पारित आदेशों की प्रतियां अपनी राय के साथ प्रदान करना उसका दायित्व है। प्रतिरक्षा करने के आदेश को अपास्त करवाने के लिए कदम उठाने के लिए वह कर्तव्यबद्ध था। कम से कम उन्हें ऐसी सलाह तो भेजनी ही चाहिए थी. उन्होंने अपीलकर्ता के वैतनिक अनुचर होने के बावजूद और इस तथ्य के बावजूद कि हितों का टकराव था, अपीलकर्ता के खिलाफ एक चरण में मामला चलाया था। दरअसल, प्रत्यर्थी संख्या 1 मामले में अपनी रुचि का खुलासा करने के लिए बाध्य था और जब उसे संक्षिप्त जानकारी की पेशकश की गई तो उसे स्वीकार करने से इनकार कर देना चाहिए था। ऐसा कुछ भी नहीं किया गया बल्कि उन्होंने अपनी बहन के लिए मुआवज़े में बढ़ोतरी का रास्ता साफ़ कर दिया।

अतः यह स्थापित किया गया कि प्रत्यर्थी संख्या 1 ने संपूर्ण कार्यवाही का चरणबद्ध प्रबंधन किया और यह निर्धारित किया कि नए प्रतिस्थापित दावेदारों के उच्च दावे को स्वीकार किया जाए।

22. वी.सी. रंगादुरई बनाम. डी. गोपालन और अन्य (1979) 1 एससीसी 308 के मामले में इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने एक वकील के कर्तव्यों और जिम्मेदारियों को बताया है। उक्त निर्णय के पैराग्राफ 30 में इस न्यायालय ने माना है कि वकील का सर्वोपरि कर्तव्य सायल के प्रति है और तदनुसार जहां वह यह राय बनाता है कि हितों का टकराव मौजूद है, उसका कर्तव्य सायल को सलाह देना है कि उसे किसी अन्य वकील को नियुक्त करना चाहिए। आगे यह माना गया कि तथ्यों के पूर्ण प्रकटीकरण के बाद सभी संबंधितों द्वारा दी गई सहमति को छोड़कर, परस्पर विरोधी हितों का प्रतिनिधित्व करना अव्यवसायिक है। न्यायालय ने आगे कहा कि एक वकील और उसके मुवक्किल के बीच का रिश्ता अपनी प्रकृति में अत्यधिक भरोसेमंद है और बहुत ही नाजुक, सटीक और गोपनीय चरित्र का है, जिसके लिए उच्च स्तर की निष्ठा और सद्भावना की आवश्यकता होती है और यह पूरी तरह से एक व्यक्तिगत संबंध है। , जिसमें उच्चतम व्यक्तिगत विश्वास और गोपनीयता शामिल है जिसे सहमति के बिना प्रत्यायोजित नहीं किया जा सकता है। इस न्यायालय ने यह भी माना कि जब एक वकील को ब्रीफ सौंपा जाता है, तो उससे पेशेवर नैतिकता के मानदंडों का पालन करने और अपने सायल के हितों की रक्षा

करने की कोशिश करने की उम्मीद की जाती है, जिनके संबंध में वह विश्वास की स्थिति रखता है।

23. हस्तगत मामले में, हमें ऐसा प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी संख्या 1 ने न केवल मामले में अपने परस्पर विरोधी हितों का खुलासा नहीं किया बल्कि शिकायतकर्ता द्वारा उस पर जताए गए भरोसे को धोखा देकर एक कदम आगे बढ़ गया। जिन तथ्यों का विश्लेषण किया गया है वे स्पष्ट रूप से प्रत्यर्थी संख्या 1 के अपराध को साबित करते हैं। उन्होंने एक वकील के रूप में अनुचित तरीके से काम किया, जो नैतिक आचरण से बंधा हुआ था और अपने मुवक्किल के हितों की रक्षा करने में विफल रहा।

24. हालांकि, प्रत्यर्थी संख्या 1 की ओर से पेश वकील ने कहा कि इस प्रकृति के मामले को सभी उचित संदेहों से परे साबित किया जाना चाहिए, न कि संभावनाओं की प्रबलता के आधार पर। उपरोक्त स्थिति पर कोई विवाद नहीं है क्योंकि इस न्यायालय द्वारा पूर्वोक्त मामले में यह भी माना गया है कि अनुशासनात्मक निष्कर्ष कार्यवाही को सिविल मुकदमों में आवश्यक सबूतों की तुलना में उच्च स्तर के सबूतों के साथ कायम रखा जाना चाहिए, फिर भी आपराधिक अभियोजन में दोषसिद्धि को बनाए रखने के लिए आवश्यक सबूत कम पड़ रहे हैं।

25. प्रत्यर्थी संख्या 1 की ओर से पेश वकील ने पवन कुमार शर्मा बनाम गुरदयाल सिंह ने (1998) 7 एससीसी 24 में इस न्यायालय के दो

न्यायाधीशों के फैसले पर भी हमारा ध्यान आकर्षित किया। जिसमें इस न्यायालय ने माना है कि पेशेवर कदाचार का आरोप अर्ध आपराधिक प्रकृति का है और इसे संभावनाओं की प्रबलता से नहीं, बल्कि युक्तियुक्त सन्देह से परे स्थापित करने की आवश्यकता है। सबूत के उपरोक्त मानक को ध्यान में रखते हुए भी, हम पाते हैं कि मामले में उल्लिखित घटनाओं के अनुक्रम और सबूतों के माध्यम से साबित हुआ कि प्रत्यर्थी संख्या 1 ने उस पेशेवर नैतिकता का पालन नहीं किया जिसके लिये वह बाध्य था।

26. तथ्यात्मक विवरण और मामले को चलाने में प्रत्यर्थी संख्या 1 का आचरण स्पष्ट रूप से उसके दुर्व्यवहार और कदाचार को साबित करता है, इसलिए, हम प्रत्यर्थी संख्या 1 को पेशेवर कदाचार का दोषी पाते हैं।

27. इसलिए, हम आदेश और निर्देश देते हैं कि प्रत्यर्थी संख्या 1 को आज से छह महीने की अवधि के लिए एक वकील के रूप में अभ्यास से निलंबित कर दिया जाए।

28. जहां तक प्रत्यर्थी संख्या 2 और 3 द्वारा उठाए गए बचाव का संबंध है। वह उपरोक्त संदर्भ मामले में एक वकील के रूप में उपस्थित हुए हैं और वह स्वयं दावेदार नहीं थे। यह सच है कि वह प्रत्यर्थी संख्या 1 के कक्ष में ही बैठता है, लेकिन केवल इस तथ्य से, यह नहीं माना जा सकता कि वह भी प्रत्यर्थी संख्या 1 के समान कदाचार का दोषी है। हालाँकि उनके रिश्तेदारों ने मुआवज़े में दावा प्राप्त करने का अधिकार खरीद लिया है और

दावेदार के रूप में प्रतिस्थापित कर दिया है, लेकिन वह केवल अधिवक्ता के रूप में उनका प्रतिनिधित्व कर रहे हैं।

एक वकील की क्षमता और इसके अलावा अपीलकर्ता द्वारा कोई अन्य तथ्य साबित नहीं किया गया है जिससे उसका अपराध साबित हो या उसे कदाचार कहा जा सके। इसी तरह, जहां तक प्रत्यर्थी संख्या 3 का संबंध है, वह केवल संदर्भ मामले में अपनी पत्नी का प्रतिनिधित्व कर रहा था और प्रत्यर्थी संख्या 1 का चैंबर-मेट था। हालाँकि उसकी पत्नी स्वयं एक दावेदार थी, उसकी पत्नी और प्रत्यर्थी संख्या 1 के बीच एक अपवित्र गठबंधन हो सकता है, लेकिन यह साबित करने और स्थापित करने के लिए रिकॉर्ड पर पर्याप्त सबूत नहीं हैं कि प्रत्यर्थी संख्या 3 ने कोई कदाचार किया है.

29. इसलिए, हम अनुशासनात्मक समिति के आदेश को बरकरार रखते हैं जिसमें कहा गया है कि प्रत्यर्थी संख्या 2 और 3 अपने खिलाफ लगाए गए आरोपों और कदाचार के आरोपों के लिए दोषी नहीं हैं। जहां तक प्रत्यर्थी संख्या 1 का संबंध है, हम बार काउंसिल ऑफ इंडिया की अनुशासनात्मक समिति द्वारा पारित आदेश को संशोधित करते हैं और निर्देश देते हैं कि उन्हें आज से छह महीने की अवधि के लिए एक वकील के रूप में अभ्यास से निलंबित कर दिया जाएगा।

30. उपरोक्त आदेश के अनुसार अपील का निस्तारण किया जाता है। शुल्क के बारे में कोई आदेश नहीं।

आर.पी.

अपील निस्तारित.

यह अनुवाद आर्टिफिशल इंटेलिजेंस टूल सुवास की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी रचना बिस्सा, वरिष्ठ सिविल न्यायाधीश एवं अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, रावतसर, जिला हनुमानगढ द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण, यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उददेश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।